ईशान्य विभा 2024

विद्या भारती पूर्वोत्तर क्षेत्र द्वारा हिंदी दिवस पर प्रकाशित ई-पत्रिका

हिंदी दिवस विशेषांक

सम्पादक -

लालजी सोनारी

विकाश शर्मा

विद्या भारती पूर्वोत्तर क्षेत्र द्वारा हिंदी दिवस पर प्रकाशित ई-पत्रिका

सलाहकार मण्डली

डॉ पवन तिवारी
क्षेत्र संगठन मंत्री,
विद्या भारती पूर्वोत्तर क्षेत्र

डॉ जगदींद्र राय चौधुरी
क्षेत्रीय मंत्री,
विद्या भारती पूर्वोत्तर क्षेत्र

डॉ मिलन रानी जमातिया
विभागाध्यक्ष, हिंदी विभाग,
त्रिपुरा विश्वविद्यालय

डॉ जोराम आनिया
एसोसिएट प्रोफेसर,
डेरा नातुंग शासकीय महाविद्यालय, ईटानगर

सम्पादक (द्वय) -

लालजी सोनारी
क्षेत्रीय कार्यालय मंत्री,
विद्या भारती पूर्वोत्तर क्षेत्र

विकाश शर्मा
शोधार्थी,
पूर्वोत्तर पर्वतीय विश्वविद्यालय

डॉ. जगदींद्र राय चौधुरी
क्षेत्रीय मंत्री

विद्या भारती पूर्वोत्तर क्षेत्र

Address : R.G. Baruah Road, Guwahati-24 vbpurvottarkshetra@gmail.com 0361-3563693

शुभकामना संदेश

राष्ट्रीय हिंदी दिवस प्रति वर्ष 14 सितंबर को मानाया जाता है। इसे देश के साथ विदेशों में रहने वाले हिंदी भाषी लोग भी बड़े ही धूम धाम से मनाते हैं। इस बार विद्या भारती पूर्वोत्तर क्षेत्र की तरफ से छोटा सा प्रयास किया गया है। इस अवसर पर एक ई-पत्रिका प्रकाशित करने के बारे में जानकारी मिलने पर बहुत खुशी हुई। वैसे हमलोग जानते हैं कि अंग्रेजी एवं मंदारिन भाषा के बाद हिंदी सबसे अधिक बोली जाने वाली भाषा है। इसलिये यह दिवस मनाने के लिये यह छोटी सी प्रस्तुति के लिए मैं हृदय से शुभेच्छा तथा धन्यवाद देता हूँ। यह प्रयास सफल हो तथा आगे भी जारी रहे, इसी आशा के साथ ----

शुभकामनाओं सहित।

डॉ जगदींद्र राय चोधुरी
क्षेत्रीय मंत्री
विद्या भारती पूर्वोत्तर क्षेत्र

डॉ. पवन तिवारी
क्षेत्रीय संगठन मंत्री

विद्या भारती पूर्वोत्तर क्षेत्र

Address : R.G. Baruah Road, Guwahati-24 vbpurvottarkshetra@gmail.com 0361-3563693

शुभकामना संदेश

करते हैं तन-मन से वन्दन, जन-गण-मन की अभिलाषा का।
अभिनन्दन अपनी संस्कृति का, आराधन अपनी भाषा का ॥

हमारा भारत विविधताओं से परिपूर्ण है, जिसमें विविध प्रकार की वेश-भूषा-भोजन-भजन-भवन और भाषायें सम्मिलित हैं, किन्तु हिन्दी भाषा इस सामासिक संस्कृति की वीणा के तारों से एक स्वर में जन-गण के मन को ऐक्यभाव में पिरोती है और सामासिक संस्कृति के भाषायी झरने को निर्झर-झर-झर झंकृत करती रहती है। कन्याकुमारी से कश्मीर तक, कच्छ से किबिथु तक आज वास्तविक रूप से जनभाषा के रूप में हिन्दी को मान्यता प्राप्त है।

भारत के सभी प्रान्तों में हिन्दी ने एक ऐसे भाषायी सेतु का कार्य किया है, जोकि जनसंवाद हेतु अत्यन्त अनिवार्य व आवश्यक होता है। इस हिन्दी दिवस – २०२४ के उपलक्ष्य में भारत के पूर्वोत्तर क्षेत्र से हिन्दी भाषा के उत्थान हेतु विद्या भारती पूवोत्तर क्षेत्र द्वारा **'ईशान्य विभा'** नामक ई-पत्रिका (ई-मैगजीन) के प्रकाशन की पहल निःसन्देह प्रशंसनीय है। इस पहल के माध्यम से पूर्वोत्तर क्षेत्र में हिन्दी भाषा के प्रचार-प्रसार को गति मिलेगी, जोकि जनसंचार का एक प्रमुख माध्यम है। इस पत्रिका में जिन आचार्यों व लेखकवृन्द ने अपनी-अपनी सुसंस्कृत रचनायें भेजी हैं, वे इस पत्रिका की शीतल-मन्दित-शोभन-सुष्मित सुरभि से समग्र भारत को सुगन्धित करेंगी, ऐसा मेरा विश्वास है। इस पत्रिका के प्रकाशन में अपना योगदान देने वाले सकल समूह को मैं साधुवाद देता हूँ और इस पत्रिका के उज्ज्वल भविष्य की कामना करता हूँ।

हिन्दी दिवस की हार्दिक शुभकामनायें!

डॉ. पवन तिवारी
क्षेत्र संगठन मंत्री
विद्या भारती पूर्वोत्तर क्षेत्र

सम्पादक की कलम से

प्रिय पाठकगण,

आप सभी का हृदय से स्वागत है **ईशान्य विभा 2024** के हिंदी दिवस विशेषांक में। यह अंक हिंदी दिवस के विशेष अवसर पर आपके समक्ष प्रस्तुत किया गया है, जो हमें हमारी मातृभाषा हिंदी के प्रति गर्व और सम्मान व्यक्त करने का अवसर प्रदान करता है। हिंदी दिवस न केवल एक भाषा का उत्सव है, बल्कि यह हमारी संस्कृति, समाज और शिक्षा पर हिंदी के गहरे प्रभाव की भी याद दिलाता है। हिंदी हमारे विचारों, भावनाओं और राष्ट्रीय चेतना की अभिव्यक्ति का प्रमुख माध्यम है। यह भाषा विविधता में एकता की भावना का प्रतीक है, जो हमारे देश के विभिन्न भाषाई और सांस्कृतिक समूहों को एकजुट करती है।

हिंदी सिर्फ एक भाषा नहीं है, बल्कि यह भारत की एकता और अखंडता की मजबूत कड़ी भी है। 14 सितंबर, 1949 को जब संविधान सभा ने हिंदी को राजभाषा का दर्जा दिया, तब यह निर्णय केवल भाषाई पहचान को स्थापित करने के लिए नहीं था, बल्कि यह देश की सांस्कृतिक और सामाजिक विविधता को एकसाथ जोड़ने का प्रयास भी था। हिंदी भाषा ने सदियों से भारतीय संस्कृति, साहित्य, कला और संगीत को समृद्ध किया है। यह भाषा हमारे देश की बहुभाषी समाज की विविधताओं को एक सूत्र में पिरोने का कार्य करती है।

आज हिंदी न केवल देश में, बल्कि विश्वभर में एक प्रमुख भाषा के रूप में उभर रही है। संयुक्त राष्ट्र और अन्य अंतरराष्ट्रीय मंचों पर हिंदी भाषा की महत्वपूर्ण भूमिका को मान्यता मिल रही है। हिंदी सिनेमा, साहित्य, समाचार पत्र, और डिजिटल मीडिया ने हिंदी को विश्व स्तर पर पहुँचाया है और यह केवल भाषाई सीमाओं तक सीमित नहीं रही है। यह हमारे देश की सांस्कृतिक धरोहर का हिस्सा है, जो आने वाली पीढ़ियों को जोड़ने का कार्य करेगी।

पूर्वोत्तर भारत में हिंदी के प्रसार के दौरान कई चुनौतियाँ भी सामने आईं। हिंदी ने यहाँ एक संपर्क भाषा के रूप में अपनी पहचान बनाई है, जो विभिन्न भाषाई और सांस्कृतिक समूहों को एकजुट करती है नागालैंड और मणिपुर जैसे राज्यों में हिंदी शिक्षकों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है, जिन्होंने हिंदी को वहाँ की शिक्षा प्रणाली में शामिल करने का महत्वपूर्ण कार्य किया है। बोड़ो भाषा की लिपि निर्धारण के समय हिंदी ने एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। जब बोड़ो भाषा की लिपि के लिए चुनाव हो रहा था, तो हिंदी प्रेमियों का समर्थन देवनागरी लिपि के पक्ष में था। अंततः देवनागरी लिपि को बोड़ो भाषा की मान्यता प्राप्त हुई। इस निर्णय से हिंदी भाषा की ओर लोगों का विश्वास और अधिक मजबूत हुआ। राष्ट्रभाषा प्रचार समिति और केंद्रीय हिंदी निदेशालय जैसे संगठनों ने पूर्वोत्तर भारत में हिंदी के प्रचार में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। अरुणाचल प्रदेश में हिंदी आम भाषा बन चुकी है, जहाँ लोग हिंदी के माध्यम से अपने विचार व्यक्त करते हैं। असम के हाफलांग क्षेत्र में बोली जाने वाली 'हाफलांग हिंदी' इसका उदाहरण है कि कैसे हिंदी ने स्थानीय संस्कृतियों में अपनी जगह बनाई है।

डिजिटल युग में हिंदी की उपस्थिति तेजी से बढ़ रही है। हिंदी सिनेमा, साहित्य, कविताएँ और समाचार पत्र इस भाषा को समृद्ध करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। लेकिन यह भी आवश्यक है कि हम इसे शहरी और ग्रामीण दोनों क्षेत्रों में समान रूप से अपनाएँ। विद्यालयों और महाविद्यालयों में हिंदी की शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए, ताकि नई पीढ़ी इस भाषा के महत्व को समझ सके और इसे अपने जीवन का अभिन्न हिस्सा बना सके।

इस विशेषांक में हमने हिंदी के प्रचार-प्रसार में अग्रणी भूमिका निभाने वाले शिक्षकों, छात्रों और विद्वानों के अनुभव साझा करते हुए सामाजिक-सांस्कृतिक प्रासंगिकता पर भी प्रकाश डाला है।

हम सभी को गर्व होना चाहिए कि हम हिंदी जैसी समृद्ध भाषा के वंशज हैं। हिंदी न केवल हमारे देश की एकता का प्रतीक है, बल्कि यह हमारी सांस्कृतिक धरोहर और सामाजिक समरसता का वाहक भी है। हमें इस भाषा के प्रति अपने उत्तरदायित्व को समझना चाहिए और इसे अपने जीवन का अभिन्न हिस्सा बनाना चाहिए।

ईशान्य विभा 2024 के **हिंदी दिवस विशेषांक** हिंदी के प्रति अपनी श्रद्धा सुमन अर्पित करने का एक विनम्र प्रयास है। आप सभी के सुझाव, विचार और प्रतिक्रिया सदैव आमंत्रित है।

धन्यवाद।

जय हिंदी, जय भारत।

संपादक

ईशान्य विभा 2024

विद्या भारती, पूर्वोत्तर क्षेत्र

अनुक्रमणिका

1. बिजू त्यौहार
2. कविता : शंकरदेव शिशु - विद्या निकेतन
3. कहानी एक वैष्णव दम्पति की
4. कविता : जय जवान - जय किसान
5. जिंदगी एक सफर है
6. पूरब की ओर: मेरी असम की पहली यात्रा
7. कविता : राष्ट्रीय ध्वज
8. भारतीय शिक्षा में स्वदेशी स्पर्श: एक नवाचारी दृष्टिकोण
9. लघु कथाएँ
10. पूर्वोत्तर की गारो जनजाति
11. निबंध - माँ
12. जीवन एक यात्रा है
13. असली अलंकार
14. मेघालय : बादलों का घर
15. भारत का हूँ रखवाला
16. भगवद गीता और आधुनिक पीढ़ी के लिए इसकी प्रासंगिकता

बिजू त्यौहार

बिजू त्यौहार चाकमा लोगों का पारंपरिक नव वर्ष के रूप में मनाया जाता है। यह त्यौहार 13 अप्रैल से लेकर 15 अप्रैल तीन दिनों तक मानाया जाता है। बिजू एक प्राचीन त्योहार है जो मूल रूप से यह सुनिश्चत करने के लिए आयोजित किया जाता है कि नए कृषि मौसम का अंत अच्छी फसल के साथ हो।

बिजू चैत्र-संक्रांति का प्रतीक है, जो बंगाली कैलेंडर का आखिरी दिन है और उत्सव चैत्र - संक्रांति के दिन से शुरु होकर तीन दिनों तक चलता है। ऐसा माना जाता है कि पहले यह त्यौहार पूरे एक पखवाड़े तक चलता था। उत्सव पहले दिन से शुरु होता है जिसे "फूल बिजू" भी कहा जाता है। इस दिन सभी के घरों की सफाई किया जाता है और फूलों से सजाया जाता है। लोग आस-पास की नदियों पर पुष्पांजलि अर्पित करते हैं तथा शाम को बुद्ध की विशेष प्रार्थना की जाती है और घरों, मन्दिरों, पेड़ों के नीचे दीपक जलाए जाते हैं।

अगले दिन "मूल बिजू" सामाजिक मेल-जोल का समय है। क्योंकि लोग अपने गाँव में दूसरों से मिलने जाते हैं, पारंपरिक खेलों में भाग लेते है जैसे की "गिले हारा" "नादेंग हारा" आदि खेला जाता है और दिन के लिए विशेष भोजन और मिठाइयाँ पकाते हैं। चाकमा मान्यता के अनुसार मूल बिजू के दिन मरने वाला व्यक्ति स्वर्ग जाता है। मूल बिजू का समापन बिजू नृत्य के प्रदर्शन के साथ होता है।

तीसरे और अंतिम दिन को "गौच्चे पोच्चे बिजू" के नाम से जाना जाता है। बड़े-बुजुर्गो को भोजन खिलाकर सम्मानित किया जाता है। इस दिन विभिन्न धार्मिक और सामाजिक गतिविधयों के प्रदर्शन के लिए अलग रखा गया है।

बिजू नृत्य

बिजू नृत्य चाकमा लोगों द्वारा उनके नए साल बिजू पर किया जाने वाला नृत्य है और यह चाकमा लोगों के पारंपरिक नृत्यों में से एक है। महिलाए चाकमा पोशाक "पिनोन और खादी" पहनती है और खुद को चांदी के आभूषणों से सजाती हैं, जबकि पुरुष सिर पर खबंग नामक टोपी, धोती और जाकिट पहनते हैं।

रमेश चाकमा
कालिंदी रानी विद्या मंदिर,
राजीव नगर, मिजोरम

शंकरदेव शिशु - विद्या निकेतन

शिक्षा का दीप जलाएँ हम,
ज्ञान-मार्ग पर बढ़ते जाएँ हम।
शंकरदेव के उपदेशों को,
हर बच्चे को बतलाएँ हम।

सपनों की ऊँचाइयाँ छूने,
मेहनत का दीप जलाएँ हम।
हर बच्चे को मिले उजाला,
उनका भाग्य सजाएँ हम।

निकेतन की किताबों में छिपा,
सफलता का हर रास्ता है।
अपने सपनों को पूरा करने,
मेहनत की लौ जलाएँ हम।

सच्चाई और ईमानदारी की राह,
बच्चों को दिखलाएँ हम।
शिक्षा का महत्व समझाकर,
उज्ज्वल भविष्य बनाएँ हम।

शंकरदेव के आदर्शों से,
जीवन को सजाएँ हम।
शिक्षा की इस यात्रा में,
हर मुश्किल आसां बनाएँ हम।

सपनों की इस दुनिया में,
उम्मीद की किरण फैलाएँ हम।
शंकरदेव शिशु विद्या निकेतन,
ज्ञान का दीप जलाएँ हम।

मनिषा साहा
कक्षा - नौवीं
शंकरदेव विद्या निकेतन,
आमबाड़ी, गुवाहाटी

कहानी एक वैष्णव दम्पति की

एक हरे-भरे जंगल में एक वैष्णव दंपति रहता था। उनका घर 69 - जुमिया कॉलोनी, हदराई, तेलियामुरा, जिला खोवाई में स्थित था। उनकी कोई संतान नहीं थी। वैष्णव का नाम श्री हरि साधन जमातिया और उनकी धर्मपत्नी का नाम श्रीमती राधा रानी जमातिया था।

दोनों ने मिलकर विचार किया कि वे अपनी जमीन को किसी व्यक्ति को बेचने के बजाय किसी संस्था को समर्पित कर देंगे ताकि इसका समाज के हित में उपयोग हो सके। एक दिन उन्होंने जमातिया समुदाय के प्रमुखों को, जो कल्याणपुर मयाल जमातिया होडा से जुड़े थे, बुलाकर अपनी जमीन के बारे में बताया। उस समय जमातिया होडा के प्रमुख श्री बिक्रम बहादुर जमातिया थे, जो पूर्वोत्तर जनजाति सेवा से जुड़े हुए थे।

श्री हरि साधन जमातिया ने अपनी भूमि को **पूर्वोत्तर जनजाति शिक्षा समिति** को दान करने का फैसला किया, ताकि इसे शिक्षा के उद्देश्य से उपयोग में लाया जा सके। उनका उद्देश्य था कि जनजातीय बच्चों के लिए एक शिक्षा केंद्र स्थापित किया जाए, जिससे बच्चों को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा मिल सके।

इस भूमि पर एक विद्यालय स्थापित किया गया, जिसका नाम **'हरि राधा विद्या मंदिर'** रखा गया। विद्यालय को सफलतापूर्वक संचालित करने की पूरी जिम्मेदारी विद्या भारती शिक्षा समिति त्रिपुरा ने ली और आज वह इस विद्यालय को सुचारू रूप से चला रही है।

शंकर जमातिया
आचार्य,
हरि राधा विद्या मंदिर,
तेलियामुरा

मैं एक किसान हूँ,
खेती करना धर्म है मेरा।
धरती का सीना चीर कर,
सोना उगाना कर्म है मेरा।

बीज जब अंकुरित हो कर,
धरती से बाहर आता है।
दिखता है सुन्दर बहुत,
खलिहान खिल जाता है।

करते हैं किसान खेती,
चाहे जो भी परिस्थिति आए।
हर समस्या से लड़कर,
अनाज फिर भी उपजाए।

मैं एक वीर जवान हूँ,
देश की रक्षा धर्म है मेरा।
सीमा पर डटे रहकर,
दुश्मनों से लड़ना कर्म है मेरा।

जब जवान सीमा पर खड़ा होता है,
तब देशवासी चैन से सो पाते हैं।
जब किसान खेती करने जाता है,
तब देशवासी कुछ खा पाते हैं।

करो किसान और जवान को सम्मान,
गर्व से कहो जय जवान जय किसान।

सुजीत कुमार शर्मा
आचार्य,
शंकरदेव शिशु विद्या निकेतन,
विश्वनाथ चारीआली

जिंदगी एक सफर है

जिंदगी एक सफर है
और हम हैं इसके पथिक।
सफर का मजा लें,
पर इतना याद रहे!
यह आसान नहीं,
क्योंकि यह हर पल बदलती है।

बहुत कुछ सिखाया जिंदगी ने मुझे
अपनों से लड़ना, रुठना, मनाना;
राहों की मुसीबतें तो बहुत झेली मैंने
पर सच कहूं -
नाजुक थे अब कठोर बन गए।

सुबह उठते ही जिंदगी कुछ शर्ते देती हैं
और शाम ढलते ही तजुर्बे।
किताबों ने जो नहीं सिखाया
वह तूने खूब सिखाया जिंदगी।
क्रोध को दबाना, जहर को पीना
गम को छुपाकर सबको गले लगाना,
यह आसान नहीं था
पर आसान बनाया तुने।

जिंदगी संग्राम है इसे लड़ो
टूटो मत, डटे रहो,
वर्ना ‘ईमानदार’ लोग
नाहक ही देंगे तुम्हें दुत्कार।

दीपा छेत्री
प्रधानाचार्या,
शंकरदेव शिशु निकेतन,
मालिगांव

पूरब की ओर: मेरी असम की पहली यात्रा

- विवेक तिवारी

दिसंबर 2016 की बात है, एक दिन मेरे प्रिय मित्र विकाश शर्मा का फोन आया। विकाश से मेरी काफी समय बाद बात हो रही थी। बातचीत के दौरान उन्होंने मुझसे कहा, "क्या कर रहे हो आजकल, मेरे पास आ जाओ, यहाँ आपको अच्छा लगेगा।" मैंने उनसे कहा कि मैं घरवालों से बात करके बताता हूँ। जब मैंने घरवालों से यात्रा की अनुमति ली तो अगले दिन मैंने विकाश को फोन करके बताया कि मैं 2 जनवरी को निकलने वाला हूँ। उन्होंने मुझे यात्रा की सभी जानकारी दी कि कहाँ आना है और कैसे पहुँचना है। अब मैं मन में हजारों सपने संजोए सफर की तैयारी में जुट गया।

शर्मा जी के अनुसार, मुझे कानपुर से ब्रह्मपुत्र मेल पकड़कर गुवाहाटी होते हुए लंका जाना था। 1 जनवरी की शाम को मैं कानपुर चला गया, क्योंकि गाड़ी अगले दिन सुबह 6 बजे थी। सर्दियों का मौसम होने के कारण गाड़ी काफी लेट चल रही थी। कानपुर स्टेशन पर इंतजार के अलावा कोई विकल्प नहीं था। अंततः गाड़ी 12 घंटे की देरी से शाम 6 बजे कानपुर स्टेशन पहुँची। रात में ठण्ड अधिक होने के कारण, मैंने जल्दी ही सोने का निर्णय किया।

सुबह "चाय गरम चाय, समोसे ले लो, समोसे" की आवाज़ से मेरी नींद खुली। गाड़ी अब बिहार में प्रवेश कर चुकी थी। मैंने एक कप चाय ली और यात्रियों की भाषा सुनने लगा। उनकी बोली मुझे एकदम अलग और रोचक लगी। धीरे-धीरे गाड़ी अपने गंतव्य की ओर बढ़ती गई।

3 तारीख की रात को हम बंगाल की सीमा में प्रवेश कर चुके थे। रात में अचानक ट्रेन कहीं रुक गई। यात्रियों में तरह-तरह की चर्चाएँ होने लगीं। कुछ लोग उतरकर देखते हैं तो पता चलता है कि इंजन खराब हो गया है। यह सुनकर मैं भी चिंतित हो गया। उस समय रात के 11 बज रहे थे। कोई विकल्प नहीं था, सुबह दूसरे इंजन आने के बाद फिर से यात्रा शुरू हुई। जैसे-जैसे हम असम के करीब पहुँचते गए, वातावरण बदलने लगा। गुवाहाटी पहुँचने से पहले ब्रह्मपुत्र नदी के भव्य रूप के दर्शन हुए। ब्रह्मपुत्र की विशालता और चारों ओर फैली हरियाली देख मन मंत्रमुग्ध हो गया। ऐसा महसूस हुआ मानो प्रकृति अपने खुले आकाश में बाँहें फैलाकर मुझे स्वागत कर रही हो। यह दृश्य मेरे लिए अविस्मरणीय था।

गुवाहाटी पहुँचने पर मैंने विकाश को फोन किया और उन्होंने मुझे उमरांग्सू बस स्टॉप तक जाने का निर्देश दिया। मैं बस स्टॉप पर पहुँचा, टिकट ली और उमरांग्सू की ओर रवाना हो गया। बस की यात्रा भी बेहद दिलचस्प थी। नई जगहें, नए लोग, अलग-अलग भाषाएँ और पहनावे—सबकुछ मेरे लिए एक नया अनुभव था।

कुछ समय बाद बस एक जगह रुकी और एक सज्जन आकर मेरी बगल वाली सीट पर बैठ गए। लगभग 20 किलोमीटर चलने के बाद वह उतर गए और उनकी जगह एक अन्य व्यक्ति बैठा, जिसके हाथ में एक खंजर था और थैले से मछली की गंध आ रही थी। बस के जंगल के रास्ते में चलते समय वह दृश्य मेरे लिए थोड़ा डरावना था। आसपास केवल जंगल था और अजीब भाषाएँ सुनाई दे रही थीं, जिन्हें मैं समझ नहीं पा रहा था। बस में कई यात्रियों के हाथों में खंजर थे, जिससे मेरा डर बढ़ता गया। मुझे लगने लगा कि मैं किसी अनजाने और खतरनाक जगह पर आ गया हूँ, जहाँ कोई मुझे जानता नहीं और न ही फोन में नेटवर्क था। मन में तरह-तरह के विचार आने लगे, लेकिन मैंने अपने मन को शांत किया और यात्रा जारी रखी।

कुछ दूर चलने के बाद मुझे वह स्थान दिखा जहाँ मुझे उतरना था। बस से उतरकर कुछ दूर चलने पर मुझे विद्यालय का बोर्ड दिखाई दिया, जिस पर लिखा था ‘श्रीमती जमुना देवी सरस्वती विद्या मंदिर, 15 कि.मी. उमरांग्सू।’ बोर्ड देखकर मैं उलझन में पड़ गया। बोर्ड पर 15 किलोमीटर लिखा था, लेकिन विद्यालय तो बिल्कुल पास था। इस पर बाद में मैंने विकाश से पूछा, तो उन्होंने बताया कि इस इलाके में जगहों के नाम किलोमीटर के हिसाब से रखे गए हैं। जहाँ मैं उतरा, उसका नाम '15 कि.मी.' है और अन्य जगहों के नाम इसी क्रम में '14 कि.मी.', '16 कि.मी.' आदि हैं।

मैं विद्यालय परिसर में प्रवेश किया। प्रधानाचार्य श्री लालजी सोनारी से मेरी पहली मुलाकात हुई। वह बहुत ही सरल और मददगार व्यक्ति थे। अगले कुछ दिनों में विद्यालय के बालक छात्रावास प्रमुख और संस्कृत विषय के आचार्य का दायित्व मुझे सौंपा गया। यह जिम्मेदारी मेरे लिए नई थी, लेकिन विद्यालय के सभी आचार्य-आचार्याओं ने मेरा पूरा सहयोग किया। विकाश जी और प्रधानाचार्य ने भी हर कदम पर मुझे मार्गदर्शन दिया।

समय बीतता गया और मेरी यह यात्रा जीवन का एक अभिन्न हिस्सा बन गई। असम के इस छोटे से विद्यालय में जो स्नेह और सम्मान मिला, वह मेरे लिए अत्यंत मूल्यवान था। विद्यालय के बच्चों और शिक्षकों से मुझे जो प्यार मिला, वह अविस्मरणीय है। समय के साथ हम सभी अलग-अलग दिशाओं में चले गए, लेकिन मेरी यह असम यात्रा और यहाँ के अनुभव हमेशा मेरी यादों में बसे रहेंगे। विद्यालय परिवार का स्नेह, यहाँ की प्राकृतिक सुंदरता और जीवन के नए अनुभव मेरे मन में सदा जीवित रहेंगे। यह मेरी असम यात्रा थी—पूरब की ओर एक अनमोल सफर, जो हमेशा मेरी स्मृति में अंकित रहेगा।

विवेक तिवारी
कार्यालय सचिव,
सरस्वती विद्या मंदिर परिचालना समिति,
हाफलांग

कविता - राष्ट्रीय ध्वज

थाली में है रोली-कुमकुम, पहला चंदन है।
करें तिरंगे की पूजा, शत-शत अभिनंदन है।
गंगा के पानी से अब तक, श्रद्धा नाता है।
विंध्य, हिमालय, अरावली अब भी मुस्कराते हैं।
जहाँ सतपुड़ा के जंगल में मौसम इतराता।
डाल-डाल संगीत बजाती, हर पत्ता गाता।
आम, नीम, पीपल, बरगद में ईश्वर की बस्ती।
हिन्दू-मुस्लिम मिल कर रहतें, ईसाई भी यार।
अलग नहीं है किसी तरह भी, सिखों का संसार।
तीजों त्योहारों पर सब हैं, आपस में मिलते,
खुशियों के मेले सजते तो, मस्ती के बाजार।
ऐसी भारत भूमि को, शत-शत वंदन है।

रोहित कुमार प्रसाद
आचार्य,
दोन्यी पोलो विद्या निकेतन,
पासीघाट

भारतीय शिक्षा में स्वदेशी स्पर्श: एक नवाचारी दृष्टिकोण

भारतीय शिक्षा प्रणाली में भारतीयकरण एक आवश्यक परिवर्तन है जो हमारी शिक्षा को अधिक सार्थक और प्रासंगिक बना सकता है। वर्तमान में हमारी शिक्षा प्रणाली में पश्चिमी प्रभाव अधिक है जो हमारी सांस्कृतिक और सामाजिक परंपराओं से दूर है। भारतीयकरण के माध्यम से हम अपनी शिक्षा को अधिक भारतीय बना सकते हैं और अपनी सांस्कृतिक विरासत को संरक्षित कर सकते हैं।

भारतीयकरण की आवश्यकता क्यों -

1. हमारी सांस्कृतिक विरासत को संरक्षित करने के लिए।
2. शिक्षा को सामाजिक रूप से प्रासंगिक बनाने के लिए।
3. राष्ट्रीयता की भावना को बढ़ावा देने के लिए।
4. स्वदेशी ज्ञान को बढ़ावा देने के लिए।

भारतीयकरण के तरीके -

1. संस्कृति, इतिहास और साहित्य को शामिल करना।
2. शिक्षण पद्धति को अधिक भारतीय बनाना।
3. शिक्षकों को भारतीयकरण के बारे में प्रशिक्षित करना।
4. भारतीयकरण के लिए संस्थानों का विकास करना।

भारतीयकरण के लाभ -

1. सांस्कृतिक जागरूकता में वृद्धि।
2. सामाजिक एकता में वृद्धि।
3. राष्ट्रीयता की भावना में वृद्धि।
4. स्वदेशी ज्ञान का विकास।

भारतीय शिक्षा की चुनौतियाँ -

1. संसाधनों की कमी एक बड़ी चुनौती है।
2. शिक्षकों की कमी एक बड़ी चुनौती है।
3. सांस्कृतिक विरासत की कमी एक बड़ी चुनौती है।
4. सामाजिक और आर्थिक असमानता एक बड़ी चुनौती है।

भारतीय शिक्षा के लिए समाधान -

1. संसाधनों का विकाश: संसाधनों का विकाश करना चाहिए, जैसे कि पुस्तकालय, प्रयोगशालाएं और कंप्यूटर।
2. शिक्षकों का प्रशिक्षण: शिक्षकों को प्रशिक्षित करना चाहिए, जिससे वे भारतीयकरण को लागू कर सकें।
3. सांस्कृतिक विरासत का संरक्षण: सांस्कृतिक विरासत का संरक्षण करना चाहिए, जैसे कि संग्रहालय, सांस्कृतिक कार्यक्रम और परंपरागत ज्ञान।
4. सामाजिक और आर्थिक असमानता को दूर करना: सामाजिक और आर्थिक असमानता को दूर करने के लिए कदम उठाने चाहिए, जैसे कि शिक्षा को सुलभ बनाना और आर्थिक सहायता प्रदान करना।
5. तकनीक का उपयोग: तकनीक का उपयोग करना चाहिए, जैसे कि ऑनलाइन शिक्षा और डिजिटल संसाधन, जिससे शिक्षा को अधिक सुलभ और प्रभावी बनाया जा सके।
6. सामुदायिक सहभागिता: सामुदायिक सहभागिता को बढ़ावा देना चाहिए, जिससे शिक्षा को सामाजिक रूप से प्रासंगिक बनाया जा सके।
7. शिक्षा नीति में परिवर्तन: शिक्षा नीति में परिवर्तन करना चाहिए, जिससे भारतीयकरण को लागू किया जा सके।
8. शिक्षकों का सम्मान: शिक्षकों का सम्मान करना चाहिए और उन्हें प्रेरित करना चाहिए, जिससे वे भारतीयकरण को लागू कर सकें।
9. विद्यार्थियों का सम्मान: विद्यार्थियों का सम्मान करना चाहिए और उन्हें प्रेरित करना चाहिए, जिससे वे शिक्षा को गंभीरता से लें।
10. शिक्षा का मूल्यांकन: शिक्षा का मूल्यांकन करना चाहिए, जिससे पता चल सके कि भारतीयकरण कितना प्रभावी है।

इन समाधानों को लागू करने से हम भारतीय शिक्षा को अधिक सार्थक और प्रासंगिक बना सकते हैं और अपनी सांस्कृतिक विरासत को संरक्षित कर सकते हैं।

भारतीय शिक्षा में स्वदेशी स्पर्श एक आवश्यक परिवर्तन है, जो हमारी शिक्षा को अधिक सार्थक और प्रासंगिक बना सकता है। हमने देखा है कि भारतीयकरण की आवश्यकता क्यों है, इसके तरीके क्या हैं और इसके लाभ क्या हैं। हमने भारतीय शिक्षा की चुनौतियों को भी देखा है और समाधानों को प्रस्तुत किया है।

अब यह हमारे हाथों में है कि हम भारतीय शिक्षा को अधिक सार्थक और प्रासंगिक बनाने के लिए कदम उठाएं। हमें संसाधनों का विकाश करना चाहिए, शिक्षकों को प्रशिक्षित करना चाहिए, सांस्कृतिक विरासत का संरक्षण करना चाहिए और सामाजिक और आर्थिक असमानता को दूर करना चाहिए।

हमें तकनीक का उपयोग करना चाहिए, सामुदायिक सहभागिता को बढ़ावा देना चाहिए, शिक्षा नीति में परिवर्तन करना चाहिए, शिक्षकों और विद्यार्थियों का सम्मान करना चाहिए, और शिक्षा का मूल्यांकन करना चाहिए।

यदि हम इन कदमों को उठाते हैं तो हम भारतीय शिक्षा को अधिक सार्थक और प्रासंगिक बना सकते हैं और अपनी सांस्कृतिक विरासत को संरक्षित कर सकते हैं। आइए हम भारतीय शिक्षा को एक नए दिशा में ले जाने के लिए काम करें।

नीलमणि चक्रवर्ती
प्रांत संयोजक
विद्या भारती त्रिपुरा

लघु कथाएँ

(1) चौकीदार

एक कंपनी का मैनेजर राहुल को अपनी कंपनी के लिए चौकीदार चाहिए था। उसके लिए उसने एक इश्तेहार निकाला। बहुत लोग इंटरव्यू देने आये लेकिन मैनेजर को कोई भी पसंद नहीं आ रहा था। आखिर में राजू नाम का एक व्यक्ति बैठा था जो इंटरव्यू के लिए आया था।

राहुल ने राजू से पूछा "आप थके हुए लग रहे हैं? कोई बीमारी है क्या?" राजू ने जबाब दिया: नहीं साहब, ऐसी कोई बीमारी नहीं है, लेकिन नींद नहीं आने की बीमारी है।"

राहुल ने तुरंत उसको रात की चौकदारी के लिए रख लिया क्यूंकि वह चाह के भी सो नहीं सकता।

(2) सच्चा मित्र

एक बार दो दोस्त थे - एक गिलहरी और एक पिल्ला। वे साथ रहते और खेलते थे। गिलहरी बहुत खेलती थी और हमेशा खेल जीतती थी। पिल्ला बुरा महसूस करता था और सोचता था कि वह किसी काम का नहीं है।

एक दिन भारी बारिश होने लगी। गिलहरी बहुत खुश थी। वह हरकतें करने लगी लेकिन अचानक उसका संतुलन बिगड़ गया और वह बारिश के पानी में गिर गई।

उसने अपने दोस्त, पिल्ले को मदद के लिए बुलाया। पिल्ला उसकी मदद के लिए आया। गिलहरी उसकी पीठ पर चढ़ गई और सुरक्षित जगह पर पहुँच गई। उसने अपनी जान बचाने के लिए अपने दोस्त को धन्यवाद दिया।

श्रीमती धृति दे
प्रधानाचार्या
त्रिपुरेश्वरी विद्या मंदिर, भटेर बाजार,
कैलाशहर, त्रिपुरा

पूर्वोत्तर की गारो जनजाति

गारो प्राचीन काल से ही असम में रहनेवाली एक जनगोष्ठी है। दंतकथाओं के अनुसार गारो सम्प्रदाय थरूवा के पूर्वपुरुष तिब्बत के सरूम नामक स्थान पर रहते थे। एकबार वहाँ अकाल पड़ गया। तब जापफा, जालिमक्षा, चुकफा, वङिफा और विजिफा इन लोगो के नेतृत्व में उस स्थान को छोड़कर हिमालय पर्वत पार करके पहले कोचबिहार पहुँचे और वहाँ कोई सालों तक रहे। लेकिन वहाँ से असम आने के समय छोटे-छोटे राज्यों के राजाओं, जैसे - धुबुरी और बिजनी के राजाओं के साथ युद्ध करके अंत में राजा आब्राचेन ने हाब्रघाट में अपना डेरा जमाया और पास-पड़ोस के जगहों को भी अपने राज्य में शामिल कर लिया। फिर वे कुछ कारणों से आपस में असंतुष्ट रहने लगे और अलग अलग दिशाओं में चले गये। कुछ लोग गारो पहाड़ में और कुछ लोग बांग्लादेश में रहने लगे।

मेघालय राज्य की एक प्रमुख जनजाति है गारो। गारो लोग मेघालय में कैसे बस गए, इसके बारे में एक कहानी प्रचलित है। कहा जाता है कि हजारों लोगों के पूर्वज चीन और तिब्बत की ओर सुदूर घाटियों में इधर-उधर भटकते रहते थे। जहाँ खाने-पीने का सामान मिल जाता वहाँ रूक जाते। जब भोजन की कठिनाई होती तो नए स्थानों की खोज में निकल पड़ते।

भोजन की तलाश में भटकने के अतिरिक्त गारो लोगों को विषम मौसम और जंगली जानवरों का भी सामना करना पड़ता था। उन्हीं दिनों दो महान वीरों ने सभी गारो लोगों को साथ लेकर हिमालय की तराई को पार करते हुए ब्रहमपुत्र नदी की ओर बढ़े। कई वर्षों की कठिन यात्रा के बाद वे लोग असम के मैदानी जंगलो में आ पहुँचे। कहा जाता है कि उनका पहला पड़ाव कोचबिहार के वनों में हुआ। कोचबिहार पर उन दिनों असम के राजा का अधिकार था। उसने गारों लोगों को आगे बढ़ने से रोक दिया। दोनों गारो महान पुरुषों ने उन्हें समझाया और उनका विवाह एक गारो सुंदरी से करवा दिया। इस तरह वातावरण मित्रतापूर्ण हो गया। आज भी कोचबिहार में तथा आसपास के कई स्थानों में गारो लोग रहते हैं।

दोनों वीरों ने अपने लोगों को गारो पहाड़ी की घाटियों की ओर चलने की सलाह दी। यह घाटी बहुत ही सुंदर थी। जमीन भी बहुत उपजाऊ थी। इस कारण उन्होंने बसने का फैसला किया। आज यह क्षेत्र गारो समाज का मूल निवास स्थान बन गया है। गारो लोग इस क्षेत्र को अपनी पवित्र भूमि मानते हैं।

गारो लोग स्वभाव से ही शांतिप्रिय, परिश्रमी और प्रकृति को प्यार करने वाले होते हैं। इसी गारो समाज के दो महापुरुषों के नाम - जा पा जलिन और पा बुंगि था। गारो समाज इन दोनों महापुरुषों को बड़ी श्रद्धा से याद करता है। कहा जाता है कि जलिन पा और बुंगि पा इतने निडर और प्रभावशाली व्यक्ति थे कि जंगल के खूंखार जानवर भी उनकी आहट या आवाज सुनकर भागने लगते थे। अपने सहज बोध और विवेक द्वारा वे आने वाले संकट का पूर्वानुमान कर लेते और अपने साथियों को मुसीबतों से बचा लेते थे।

गारो लोग प्रारंभ से ही प्रकृति के विभिन्न प्रकार के संसाधनों की तलाश करना ही अपना मनोरंजन मानते हैं। जंगलों में घूमना, फल-फूल, अन्न, कंद-मूल आदि की खोज करना, खेती के लिए उपजाऊ भूमि की पहचान करना आदि उनको शुरू से ही पसंद है। आज भी गारो लोग अपने पारंपरिक हुनर को कायम रखे हुआ हैं।

गारो जनजाति की मुख्य विशेषता महिलाएँ हैं। गारो महिलाएँ संपत्ति की मालकिन होती हैं। यहाँ एक प्रथा है जिसके अनुसार सब से छोटी बेटी को अपनी माँ से संपत्ति विरासत में मिलती है। दूसरी जातियों के विवाहों के विपरीत, इस जनजाति में विवाह की रस्में पूरी होने के बाद पुरुष को अपनी पत्नी के घर रहना पड़ता है।

यह जनजाति संगीत और नृत्य की बहुत बड़ी प्रेमी है। इस जनजाति द्वारा विभिन्न पारंपरिक संगीत वाद्ययंत्रों जैसे तार वाले वाद्य यंत्र, पवन और स्वर ध्वनि वाले वाद्य यंत्रो का उपयोग किया जाता है। गारो पुरुष सर पर पगड़ी पहनते हैं। महिलाएँ कमर के चारों ओर कपड़ा बाँधती हैं। इसके अलावा गारो महिलाएँ दागावान्दा, दागशारी, चुनी आदि पहनती हैं।

गारो लोग अलग-अलग त्योहार भी मनाते हैं। वंगाला उन महत्वपूर्ण त्योहारों में से एक है जो आमतौर पर अक्टूबर के महीने में मनाया जाता है। गारो लोग इस त्योहार को फसल की कटाई के बाद अपने देवता सालिजोंग को धन्यवाद देने के प्रतीक के रूप में मनाते हैं। इस जनजाति के लोगों में घर पर अनाज से शराब बनाने की तथा सेवन करने की परंपरा है। मुख्य खेती की फसलें चावल, अदरक, बाजरा, केले, सब्जियाँ, मिर्च और कपास हैं। गारो लोग मांस हेतु पशुओं का पालन करते हैं। इन्हें सुखी हुई मछली बहुत पसंद है।

पहले समय में पहाड़ी गारो युवाओं की शिक्षा का प्राणकेन्द्र था नकपांथे अथवा डेकाचांग। वहाँ गाँव के सभी युवा मिलकर बांस, बेंत आदि के द्वारा हस्तकला, वाद्य यन्त्र बनाना, खेल-कूद आदि कार्य किया करते थे।गारो लोगों को गुस्सा बहुत जल्दी आता है। जिसके कारण पड़ोस के राजा भी शासन नहीं कर पा रहे थे। इसलिए अंग्रेजों ने छल-कपट करके उन्हें दमन करने के लिए मिसनरी द्वारा धर्म परिवर्तन कराने लगे। उनके लिए उपासना स्थल, विद्यालय आदि स्थापना कर जगह-जगह पर मिसनरिओं द्वारा मिसन परिचालना करने को दिया गया।

बदलते वातावरण एवम् तथाकथित आधुनिकतावादी कु-चक्र के मकड़जाल में बाहरी तत्वों द्वारा लगातार फाँसने के प्रयासों के बावजूद भी गारो जनजाति अपनी सांस्कृतिक विरासतों को संजोने तथा पुनः प्रचलन कर अपना अस्तित्व हेतु संघर्षरत है, इस बात से उनकी जिजीविषा का अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है।

श्री नीलिमा तालुकदार वर्मन
प्रधानाचार्या,
शंकरदेव शिशु विद्या निकेतन, क्षेत्री

निबंध

माँ

माँ एक ऐसा शब्द है जो सबका प्रिय है। बाकी रिस्ते जन्म के बाद जुड़ते हैं परंतु माँ से संबन्ध जन्म के पहले ही जुड़ जाता है। चोट बच्चे को लगती है पर दर्द माँ को होता है। बच्चे मुसीबत में पड़ने पर तकलीफ माँ को होती है। बच्चा रोता है तो आसूँ माँ के निकलते हैं, बच्चा हँसता है तो माँ हँसती है। माँ का कर्ज बच्चे कभी नहीं चुका पाते। हमारे जीवन में तीन माँएं हैं। पहली जन्मदात्री माँ, दूसरी जन्मभूमि और तीसरी मातृभाषा।

पहली माँ हमे जन्म देती है। हमे पाल-पोस कर बड़ा करती है। हमे उँगली पकड़कर चलना सिखाती है। अपने हाथों से हमारे सारे काम करती है। हमारे चरित्र को गढ़ती है। माँ बच्चों के लिए हँसते-हँसते सारे तकलीफ झेलती है। खुद भूखा रहकर भी बच्चों को खिलाती है। बच्चे के लिए माँ प्राण तक त्याग सकती है। इसलिए माँ को पृथ्वी से भी श्रेष्ठ कहा गया है।

हमारे जीवन की दूसरी माँ है मातृभूमि जो हमें चलने के लिए, रहने के लिए जगह देती है, खाने के लिए अनाज-फल आदि देती है, मकान बनाने के लिए लकड़ी देती, पहनने के लिए वस्त्र (कपास) देती है। इस तरह मातृभूमि भी माँ की तरह ही हमारी देख-रेख करती है।

तीसरी माँ है हमारी मातृभाषा। मातृभाषा जो हमारे पैदा होने के बाद से घर के तथा आस-पड़ोस के लोगों से सुन-सुनकर सिखते है तथा बोलते हैं। हम जीव श्रेष्ठ मानव बनकर बड़े होते हैं, लेकिन अगर हम मन के भाव तथा विचारों को एक दूसरे के सामने प्रकट न कर सकें, एक दूसरे से बाँट न सके तो पशु और हममें कोई अन्तर नहीं रहेगा। मातृभाषा ही हमें मन के विचारों को प्रकट करने का माध्यम बनकर अन्य जीवों से ऊपर उठने में मदद करती है। मातृभाषा के माध्यम से हम अपनी जाति, संस्कृति का प्रचार कर सकते हैं और संसार में अपनी पहचान बना सकते हैं।

मनुष्य के जीवन में इन तीनों माँओं का स्थान सर्वोपरि है। किसी एक माँ के बगैर मनुष्य अधूरा है।

श्रीरुपांजली गोस्वामी
आचार्या,
शंकरदेव शिशु/विद्या निकेतन,
आमबारी

जीवन एक यात्रा है

जीवन एक यात्रा है, मुस्कुरा के जिओ,
आते-जाते हर लम्हों को यूँ ही न गवाँओ।

जीवन नामक इस यात्रा को हर उस व्यक्ति को तय करना पड़ता है जिसेने इस धरती पर जन्म लिया है। वैसे तो भगवान ने हर किसी को कोई न कोई काम के लिए या कुछ मकसद के लिए भेजा है। लेकिन हम हैं कि अपने स्वार्थ और अपने काम न होने पर भगवान को कोसना शुरू कर देते हैं। अपनी प्रतिष्ठा और मान-सम्मान को जरा सा ठेस पहुंचते ही हम तिलमिला उठते हैं! धन-वैभव का संग्रह तथा अपनी आकांक्षाओं को पूरा करते-करते हम जीवन का मतलब ही खो देते हैं। हम भूल जाते हैं कि जीवन नामक इस यात्रा को तय करने में हमने कई सारी गलतियाँ कर बैठे हैं जिसके कारण बहुत सारे दुःख-दर्द, कठिनाइयों से गुजरना पड़ता है। जिन्दगी के लिए हमारा नजरिया जब तक नहीं बदलेगा तब तक हर कठिनाइयों से गुजरना पड़ेगा। रो-रो कर जिने से यह कभी खत्म न होने वाला सफर बन जाएगा। अगर इस यात्रा को हम हँसकर पार करेंगे तो बहुत ही आसान हो जाएगा।

हमारा मन कल्पवृक्ष के समान है। इसे ठीक रूप से पहचानना पड़ेगा। मन को जिस तरफ ले जाएँगे यह उसी तरफ जाएगा। बस सोच का फर्क है। हमे अगर कहीं जाना है तो उस जगह का टिकट लेकर यात्रा करते हैं। तो जीवन नामक इस यात्रा का लक्ष्य क्या है? मुक्ति ही इस यात्रा का लक्ष्य है। तो मुक्ति मिलेगी कैसे? हमें अपने मन, वचन, कर्म को लक्ष्य की तरफ मोड़ना है ताकि लक्ष्य को पाकर हम सुखद जीवन बिता सकें। सुख और दुःख तो मन के ऊपर निर्भर करता है, सोच के ऊपर निर्भर करता है। लक्ष्य अगर निर्धारित हो, स्वप्न अगर वास्तविक हो तो यात्रा बड़ी ही रोचक और सार्थक बन जाती है। इस यात्रा में अगर हम आस-पास के लोगों को भी जोड़ कर चलेंगे, हर उसका ख्याल रखेंगे, तो यात्रा कम समय में ही तय कर पायेंगे। खुद के लिए और खुद के साथ चलेंगे तो यात्रा में बहुत मुश्किलें आ सकती हैं और सम्भवतः उन मुश्किलों का सामना हम कर ही न पाएँ और लक्ष्य से भटक जाएँ। इसलिए सभी के साथ, सभी के पास होकर गुजरना अच्छा है।

हम सभी यह मानकर चलते हैं कि मृत्यु के बाद हमारा अगला जन्म कर्म के अनुसार ही होता है। इसलिए हमें इसी जन्म में यह सोचना है कि मृत्यु के बाद कौन सा संस्कार अपने साथ ले जाऊँ जिससे मुझे स्वर्ग मिले। ऐसा तो नहीं कि लक्ष्य स्वर्ग में जाने का है लेकिन स्वर्ग में जाने के लिए जो-जो कार्य इस जन्म में करना पड़ता है, उसे अगर ठीक तरीके से करें तो हम इसी जन्म में स्वर्ग का सुख प्राप्त कर सकेगें। यानी जीवन की इस यात्रा को स्वर्ग बना सकेंगे। सबकी खुशी को अपना मानकर चलेंगे तो यात्रा में साथियों की कभी कमी नहीं होगी। निरन्तर श्रेष्ठ विचार मन में रखने से मन में दिव्यता जागृत होने लगती है। हमारा सुन्दर विचार ही सुखी मन की चाभी है। इसलिए विचारों को सुन्दर बना कर सुखी यात्रा का अनुभव लेना चाहिए।

अंत में –

जीवन रूपी इस यात्रा में समस्या तो रोज है,
खुशी-खुशी इसे अपनाओ तो मंजिल भी पास है।
हौसला रखो खुद पर, उस भगवान पर,
सबकुछ देता है वह, सही वक्त आने पर।

मनमनि शर्मा
प्रधानाचार्या,
शंकरदेव शिशु निकेतन,
मिलनपुर, तेजपुर

असली अलंकार

"क्षीयन्ते खलु भूषणानि सततं वाग्भूषणं भूषणम्"

अन्य सभी अलंकार क्षय (नष्ट) हो जाते हैं पर वाणी ही असल अलंकार है। कहा जाता है वाणी और व्यवहार ऐसे अलंकार हैं जो हमारा परिचय संसार से कराते हैं।

आजकल देखा जाता है कि चारों ओर दिखावा को ही बढ़ावा दिया जाता है। यूँ कहें हर कोई एक दूसरे को बड़ा, होनहार, सुन्दर एवं ज्ञानी दिखाने के फेरे में रहता है। वस्तुतः वह सही नहीं है। असल में जो मनुष्य जितना ज्ञानी बनता है उतना ही विनयी, नम्र होकर अपने आपको छोटा तथा ईश्वर का दास मानने लगता है। महर्षि वाल्मीकि ने इतने बड़े ग्रंथ रामायण को लिखकर अंत में क्षमा याचना करते हुए लिखा है कि, मैं कुछ जानता नहीं हूँ, दास समझकर धृष्टता के लिए क्षमा चाहता हूँ। जितने भी महापुरुष हुए, किसीने कभी नहीं कहा कि मैं बड़ा हूँ या मैंने यह किया, वह किया। क्योंकि उन्हें पता था दिखाने या कहने भर से कोई बड़ा नहीं होता। हमारे देश की एक और विशिष्टता यह भी है कि हमारे यहाँ जन्म से लेकर मरण तक अनेक संस्कार हैं। इनमें से कुछ पारिवारिक कुछ सामाजिक। अतः हमें भी इन संस्कारों से संस्कारित एवं सुचरित्रवान होकर पूर्वजों के द्वारा बताए मार्ग पर चलकर ही अपने जीवन को आगे बढ़ाना होगा। तभी हमारा मनुष्य जीवन सार्थक बन पाएगा।

जो लोग दूसरे के सामने अपने आप को बड़ा दिखाना चाहते हैं, वह तो वास्तव में जानवर का धर्म है। एक बिल्ली जब दूसरी बिल्ली को देखती है तो अपने शरीर को ऊँचा उठाकर खुद को बड़ा होने का दिखावा करती है ताकि सामने वाला डरकर वहाँ से भाग जाए। मनुष्य को तो बड़े होने के साथ-साथ एक अच्छा चरित्रवान इंसान भी बनना चाहिए। आजकल थोड़ा-बहुत व्यावहारिक ज्ञान सभी को है। पर शिष्टतायुक्त वाणी बहुत कम लोगों से ही सुनने को मिलती है। बच्चों को सुचरित्रवान बनाने से पहले माता-पिता और शिक्षक को चरित्रवान होना पड़ता है। आजकल के बच्चे भी बहुत समझदार हैं। क्योंकि वह प्रायः माता-पिता का ही नकल करेंगे। इससे पहले कि उनका चरित्र स्खलन हो हमें व्यावहारिक ज्ञान अपने घर से ही उन्हें देना चाहिए। यद्यपि विद्यालय से आक्षरिक ज्ञान के साथ कुछ संस्कार मिलता है पर केवल विद्यालय के भरोसे रहना भी ठीक नहीं।

चरित्र अच्छा हो और सीधा-साधा एवं सरल मन हो तो सबको जीता जा सकता है। अपनी ओर लोगों का ध्यान खींचने के चक्कर में कभी कोई ऐसा कार्य नहीं करना चाहिए, जिससे हमारे माता-पिता, हमारे ज्येष्ठजनों को लज्जित होना पड़े। हमारे संस्कार ही तो हमें अंदर से सुंदर बनाते हैं और इन संस्कारों के बिना तो हमारी ऊपरी सुंदरता किसी काम की नहीं है। ये अन्दर की सुंदरता ही हमें भीड़ से अलग कर अलग पहचान बनाती है। हमें बस अपने जीवन के लक्ष्य तय कर उन लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए ईमानदारी से प्रयास करना है।

फाल्गुन उपाध्याय
संस्कृत आचार्य
शंकरदेव शिशु निकेतन,
राजाबाड़ी

मेघालय : बादलों का घर

मेघालय भारत के पूर्वोत्तर हिस्से में स्थित एक सुंदर और प्राकृतिक संपदा से परिपूर्ण राज्य है, जिसका नाम ही इसकी विशेषता को प्रकट करता है। संस्कृत के शब्द "मेघ" (बादल) और "आलय" (घर) से बना यह राज्य सचमुच बादलों का घर है। 1972 में इसे असम से अलग कर एक स्वतंत्र राज्य का दर्जा दिया गया। इसकी राजधानी शिलांग है, जो अपने प्राकृतिक सौंदर्य, हरे-भरे पहाड़ों, झरनों और मनमोहक वातावरण के लिए प्रसिद्ध है।

मेघालय तीन प्रमुख पहाड़ी श्रृंखलाओं से मिलकर बना है—खासी हिल्स, जैंतिया हिल्स, और गारो हिल्स। ये पहाड़ियाँ इस राज्य को अद्वितीय बनाती हैं। राज्य के कुल क्षेत्रफल का अधिकांश हिस्सा वनाच्छादित है, जहाँ विभिन्न प्रकार की वनस्पतियाँ, जीव-जंतु और रंग-बिरंगे फूल पाए जाते हैं। यहाँ की नदियाँ, झरने और गुफाएँ पर्यटकों को आकर्षित करती हैं। चेरापूंजी और मावसिनराम जैसे स्थान विश्व में सबसे अधिक वर्षा वाले स्थानों के रूप में जाने जाते हैं। मावलिन्नॉन्ग, जिसे एशिया का सबसे स्वच्छ गाँव कहा जाता है, भी यहीं स्थित है।

मेघालय की आबादी में अधिकांश लोग जनजातीय हैं, जिनमें प्रमुख रूप से खासी, गारो, और जैंतिया जनजातियाँ शामिल हैं। ये जनजातियाँ अपनी अनूठी परंपराओं, रीति-रिवाजों और मातृवंशीय समाज व्यवस्था के लिए प्रसिद्ध हैं। खासियों और जैंतिया समाज में संपत्ति और उत्तराधिकार मातृवंशीय प्रणाली के अनुसार चलते हैं, यानी परिवार की संपत्ति और विरासत सबसे छोटी बेटी को मिलती है।

गारो जनजाति राज्य की दूसरी सबसे बड़ी जनजाति है, जो अपने नृत्य, संगीत और त्योहारों के लिए जानी जाती है। **वांगाला** त्योहार गारो समाज का सबसे बड़ा पर्व है, जिसमें लोग अपने देवता सालेजोंग को फसल कटाई के बाद धन्यवाद देते हैं। गारो लोग अपनी सांस्कृतिक विरासत को संजोए रखने में गर्व महसूस करते हैं और उनका जीवनशैली प्रकृति से जुड़ी होती है।

जैंतिया जनजाति मुख्य रूप से मेघालय के जैंतिया हिल्स में निवास करती है। इनकी मातृवंशीय प्रणाली में भी महिलाओं को विशेष दर्जा दिया जाता है और परिवार की संपत्ति सबसे छोटी बेटी को मिलती है। जैंतिया लोग कृषि पर निर्भर हैं और धान, मक्का, और सब्जियों की खेती करते हैं। उनका प्रमुख त्योहार **बेह-दिएनख्लम** है, जो मानसून के दौरान बुरी आत्माओं से रक्षा और अच्छी फसल की कामना के लिए मनाया जाता है।

खासी जनजाति मेघालय की सबसे बड़ी जनजाति है, जो राज्य की लगभग आधी जनसंख्या का हिस्सा बनाती है। खासियों की खासियत उनकी मातृसत्तात्मक प्रणाली है, जहाँ विवाह के बाद पति पत्नी के घर में रहता है और संपत्ति का उत्तराधिकार महिलाओं के माध्यम से चलता है। खासियों के जीवन में संगीत और नृत्य का भी बड़ा महत्व है। उनका प्रमुख त्योहार **शाद सुक मैनसीम** है, जिसमें विशेष पारंपरिक परिधानों में लोग नृत्य करते हैं और अपनी संस्कृति का जश्न मनाते हैं।

मेघालय के कई पर्यटन स्थल विश्वभर के पर्यटकों को आकर्षित करते हैं। चेरापूंजी और मावसिनराम अत्यधिक वर्षा के कारण विशेष रूप से प्रसिद्ध हैं, जबकि मावलिन्नॉन्ग अपनी स्वच्छता और खूबसूरत बगीचों के कारण चर्चा में रहता है। उमियाम झील और शिलांग पीक राज्य के मनोरम दृश्य प्रस्तुत करते हैं, और एडवेंचर स्पोर्ट्स के शौकीन पर्यटकों के लिए डाउकी नदी एक शानदार स्थल है, जो कि भारत-बांग्लादेश सीमा पर स्थित है।

इगुआतुइंग कुआमे
आचार्य
श्री कांची कामकोटि विद्या भारती विद्यालय,
शिलांग

भारत का हूँ रखवाला

मैं पूर्वोत्तर क्षेत्र का सैनिक,
भारत का हूँ रखवाला।
सीमाओं पर गहरी दृष्टि,
मैं रक्षक हूँ मतवाला।।
नागभूमि मणिपुर त्रिपुरा
मेघालय अरुणाचल मिजोरम।
निसर्ग को है यहां विविधता,
पर सब मिलकर पूर्ण असम।।
कोटि-कोटि वीरों की धरती,
रुधिर समर्पण वाला।
सीमाओं पर गहरी दृष्टि,
मैं रक्षक हूँ मतवाला।।
भुवन-भानु की किरणें भरतीं,
रग में दिव्य पखर ज्वाला।
श्रम ही है जैविक धरोहर,
पुरखों ने यह सिखलाया।।
सूर्य-चन्द्र की पूजक धरती,
प्रकृति का है खेल निराला।
सीमाओं पर गहरी दृष्टि,
मैं रक्षक हूँ मतवाला।

भारत माता की जय।

लाइश्रम केशव सिंह
प्रधानाचार्य
बाल विद्या मंदिर निङ्यौखों
पता-निङ्यौखों वार्ड न०. 3,
विष्णुपुर - जिला, राज्य-मणिपुर

भगवद गीता और आधुनिक पीढ़ी के लिए इसकी प्रासंगिकता

भगवद गीता, एक 700 श्लोक वाला हिंदू धर्मग्रंथ है, जो महाभारत का हिस्सा है। इसमें राजकुमार अर्जुन और भगवान कृष्ण के बीच की बातचीत को दर्शाया गया है। यह प्राचीन ग्रंथ आज भी वैश्विक स्तर पर महत्वपूर्ण है और जीवन की जटिलताओं को समझने और प्रेरित करने का स्रोत है। भगवद गीता की शिक्षाएँ कर्तव्य, नैतिकता और आध्यात्मिकता के विभिन्न पहलुओं को छूती हैं। यद्यपि यह युद्ध के संदर्भ में है, पर इसके सबक सार्वभौमिक रूप से लागू होते हैं।

गीता में धर्म की अवधारणा पर चर्चा की गई है, जो कर्तव्य और धार्मिकता से संबंधित है। अर्जुन युद्ध की धार्मिकता पर सवाल उठाते हैं और भगवान कृष्ण उन्हें ज्ञान प्रदान करते हैं। आज के समय में, गीता की शिक्षाएं नैतिक दुविधाओं से निपटने में अमूल्य मार्गदर्शन प्रदान करती हैं। भगवद गीता में आत्म-साक्षात्कार की खोज पर जोर दिया गया है। भगवान कृष्ण अर्जुन को आत्मा की पहचान करने और अपने सच्चे स्वरूप को समझने के लिए प्रेरित करते हैं, जिससे जीवन में उद्देश्य और अर्थ प्राप्त किया जा सके।

आधुनिक पीढ़ी भौतिकवाद में फंसी रहती है, लेकिन गीता की शिक्षाएँ यह सिखाती हैं कि सच्ची संतुष्टि आंतरिक स्वरूप को समझने और उच्च आध्यात्मिक उद्देश्य की खोज से मिलती है। यह संदेश तेजी से भागती दुनिया में तनाव और खालीपन से उबरने के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। गीता प्रतिकूल परिस्थितियों से निपटने और लचीलापन बनाए रखने पर गहन अंतर्दृष्टि देती है। अर्जुन को युद्ध में कठिनाई का सामना करना पड़ता है और भगवान कृष्ण के मार्गदर्शन से वह अपनी भावनाओं पर काबू पाकर, डर का सामना करके अपने कर्तव्य को निभाने के लिए प्रेरित होता है।

आधुनिक दुनिया में लोगों को विभिन्न प्रतिकूलताओं का सामना करना पड़ता है। गीता की शिक्षाएँ लचीलेपन, धैर्य और कठिनाइयों के सामने समता बनाए रखने के लिए मूल्यवान रणनीतियाँ प्रदान करती हैं।
भगवद गीता योग के विभिन्न मार्गों का परिचय देती है: कर्म योग, भक्ति योग और ज्ञान योग। गीता के अनुसार, योग केवल शारीरिक मुद्राओं तक सीमित नहीं है, बल्कि इसमें मन और आत्मा का अनुशासन भी शामिल है।

आधुनिक पीढ़ी में, जहां योग और ध्यान की रुचि बढ़ रही है, गीता की शिक्षाएँ आंतरिक शांति और आत्म-पारगमन के लिए महत्वपूर्ण हैं। गीता का योग अभ्यास तनाव प्रबंधन, आंतरिक संतुलन खोजने, और आध्यात्मिक क्षमता के विकास के लिए उपयोगी हो सकता है। भगवद गीता नैतिक नेतृत्व के लिए एक मार्गदर्शक है। कृष्ण अर्जुन को ईमानदारी और ज्ञान के साथ नेतृत्व का महत्व समझाते हैं। आज के नेता गीता से नैतिक आचरण, सहानुभूति और अपने अनुयायियों की भलाई पर जोर देने के मूल्यवान सबक ले सकते हैं।

"विविधता में एकता" के अनुसार, भगवद गीता प्राणियों की एकता और हर व्यक्ति के भीतर परमात्मा की उपस्थिति को सिखाती है। गीता का यह संदेश विविधता से भरे विश्व में एकता और सहिष्णुता को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण है। यह विभिन्न दृष्टिकोणों का सम्मान करने और सामंजस्यपूर्ण सह-अस्तित्व को प्रोत्साहित करता है।

निरंतर पर्यावरण संबंधी चिंताएँ बढ़ रही हैं। गीता की शिक्षाएँ पृथ्वी के जिम्मेदार प्रबंधन की आवश्यकता को दर्शाती हैं। गीता का ज्ञान वैश्विक जागरूकता के साथ मेल खाता है।
भगवत गीता आधुनिक पीढ़ी के लिए मार्गदर्शक है। इसके कर्तव्य, आत्म-बोध, लचीलापन और नैतिक आचरण पर आधारित शिक्षाएँ आज भी प्रासंगिक हैं। गीता का ज्ञान हमें उद्देश्य, आंतरिक शांति और नैतिक जीवन जीने के लिए प्रेरित करता है। इसका गहरा संदेश समय से परे है। आइए हम सब इससे प्रेरणा लेकर अपने जीवन को सार्थक बनाएँ।

पंकज पराशर बोरा
आचार्य
दोन्यी पोलो विद्या निकेतन,
पासीघाट

ईशान्य विभा

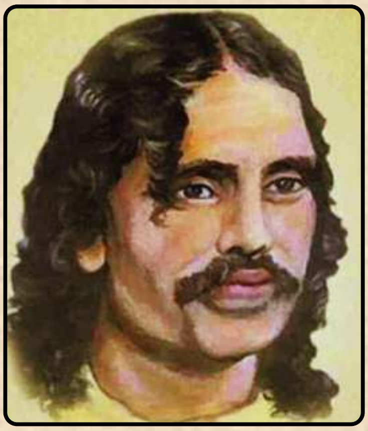

निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल।
बिन निज भाषा-ज्ञान के, मिटत न हिय को सूल।
अंग्रेजी पढ़ि के जदपि, सब गुन होत प्रवीन।
पै निज भाषा-ज्ञान बिन, रहत हीन के हीन।
उन्नति पूरी है तबहिं जब घर उन्नति होय
निज शरीर उन्नति किये, रहत मूढ़ सब कोय

- भारतेंदु हरिश्चंद

मेरी भाषा में तोते भी राम-राम जब कहते हैं।
मेरे रोम-रोम से मानो सुधा स्रोत तब बहते हैं।
सब कुछ छूट जाय मैं अपनी भाषा कभी न छोड़ूंगा।
वह मेरी माता है उससे नाता कैसे तोड़ूंगा।
कभी अकेला भी हूँगा मैं तो भी सोच न लाऊंगा।
अपनी भाषा में हिन्दी के गीत वहां पर गाऊँगा।
मुझे एक संगिनी वहां पर अनायास मिल जायेगी।
मेरे साथ प्रतिध्वनि देगी, हृदय कमल खिल जायेगी।

- मैथिलीशरण गुप्त

- अटल बिहारी बाजपेयी

गूंजी हिंदी विश्व में,
स्वप्न हुआ साकार
राष्ट्र संघ के मंच से,
हिंदी का जयकार
हिंदी-हिंदी में बोला,
देख स्वभाषा प्रेम
विश्व अचरज से डोला,
कह कैदी कविराय
मेम की माया टूटी,
भारत माता धन्य,
स्नेह की सरिता फूटी।

vbpurvottar

Asom Prakashan Bharati, Namghar Path,
RGB Road, Guwahati

CONTACT US

+91 60009 05472

admin@vbsamwad.co.in

vbsamwad.co.in